मंथन कमांक 30
सामाजिक आपातकाल और वर्तमान वातावरण

जब किसी अव्यवस्था से निपटने के लिए नियुक्त इकाई पूरी तरह असफल हो जाये तथा अल्पकाल के लिए सारी व्यवस्था में मुख्य इकाई को हस्तक्षेप करना पडे तो ऐसी परिस्थिति को आपातकाल कहते हैं। व्यक्ति और समाज एक दूसरे के पूरक होते हैं। दोनों के अपने अपने स्वतंत्र अस्तित्व भी होते है तथा एक दूसरे के सहभागी भी। समाज सर्वोच्च होता है तथा राष्ट्र सहित अन्य सभी इकाइयॉ उसकी सहायक होती हैं। वैसे तो सम्पूर्ण विश्व की सामाजिक परिस्थितियॉ आपातकाल के अनुरुप हैं किन्तु हम वर्तमान समय में पूरे विश्व की चर्चा न करके अपनी चर्चा को भारत तक ही सीमित रख रहे हैं।

आपातकाल कई प्रकार के होते हैं जिसमें आर्थिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय, सामाजिक, वौद्धिक, धार्मिक, आदि मुख्य माने जाते हैं। आपातकाल मुख्य रुप से उस परिस्थिति को कहते हैं जब कोई व्यक्ति या व्यक्ति समूह अन्य लोगों की इच्छा के विरुद्ध उन्हें अपनी नीतियों पर काम करने के लिए बाध्य कर दे। यद्यपि भारत में आर्थिक धार्मिक तथा अन्य परिस्थितियॉ भी खतरनाक मोड ले रही हैं तथा सब पर सोचने की आवश्यकता है किन्तु हम यहॉ समाज पर राज्य के खतरे तक ही अपने को सीमित रख रहे हैं। राज्य की असफलता सिद्ध करने के लिए कुछ लक्षणों पर विचार करना होगा–

(1)जब राज्य व्यवस्था सुरक्षा और न्याय की तुलना में जनकल्याण के कार्यो को प्राथमिकता देना शुरु कर दे लोकहित का स्थान लोकप्रियता ले ले। ग्यारह समस्याऍ–(1) चोरी, डकैती, लूट (2) बलात्कार (3) मिलावट कमतौलना (4) जालसाजी, धोखाधडी (5) हिंसा और आतंक (6) चरित्रपतन (7) भ्रष्टाचार (8) साम्प्रदायिकता (9)जातीय कटुता (10) आर्थिक असमानता (11) श्रमशोषण। स्वतंत्रता के बाद ये सभी समस्याए लगातार बढ रही हैं तथा भविष्य में भी किसी समस्या के नियंत्रण की स्पष्ट योजना नहीं दिख रही है। नरेन्द्र मोदी के आने के बाद कुछ समाधान की जो धुधली सी रुपरेखा दिख रही है वह भी व्यक्तिगत और तानाशाही तरीके से आ रही है,व्यवथागत और लोकतांत्रिक तरीके से नहीं।

(2)समाज व्यवस्था पूरी तरह छिन्न भिन्न हो गई है। समाज का स्वरुप जानबूझकर इतना कमजोर कर दिया गया है कि या तो राज्य ही समाज का प्रतिनितिधत्व करता दिख रहा है अथवा छोटे छोटे समाज तोडक संगठन। राज्य योजनापूर्वक समाज को धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रियता, उम्र,लिंग, गरीब अमीर, किसान मजदूर,शहरी ग्रामीण आदि वर्गो में बांटकर वर्ग विद्वेश,वर्ग संघर्ष बढाने का प्रयास कर रहा है। राज्य समाज का प्रबंधक न होकर कष्टोडियन बन बैठा है।

(3)समाज का संस्थागत ढांचा कमजोर करके संगठनात्मक ढांचा मजबूत किया जा रहा है। सब जानते है कि संस्थाए समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। तो संगठन आवश्यकताओं को पैदा करते है। फिर भी इतना जानते हुए भी संगठनों को बढावा दिया जा रहा है।

(4)चिंतन गौण हो गया है और प्रचार महत्वपूर्ण हो गया है। यहॉ तक कि संसद में भी चिंतन का वातावरण कभी नहीं बनता। भारत संसदीय लोकतंत्र की आंख मूंदकर नकल कर रहा है जबकि उसे भारतीय परिवेश में नई व्यवस्था के प्रारुप पर चिंतन करना चाहिए था।

(5)समाज में अहिंसा कायरता का पर्याय बन गई है। दो बातें भारतीय संस्कृति का आधार मानी जाने लगी हैं– (1) मजबूत से दबा जाये और कमजोर को दबाया जाये। (2) न्युनतम सकियता और अधिकार लाभ के मार्ग खोजे जाये। भारत दोनों दिशाओं में लगातार बढ रहा है।

(6)समाज लगातार व्यक्ति केन्द्रित होता जा रहा है। विचार केन्द्रित नहीं,नीति केन्द्रित नहीं, सिद्धांत केन्द्रित भी नहीं। बिना विचारे व्यक्ति के पीछे चलने की प्रवृत्ति निरंतर बढाई जा रही है।

इस तरह से मैं इस निष्कर्ष पर पहुॅचा हूॅ कि वर्तमान भारत की सामाजिक परिस्थितियॉ सामाजिक आपातकाल के पूरी तरह उपयुक्त है।

स्वतंत्रता के बाद यदि हम इस गिरावट के कारणों की समीक्षा करें तो इसमें दो लोगों का विशेष योगदान दिखता है– (1) पंडित नेहरु (2) भीमराव अम्बेडकर। पंडित नेहरु ने समाज को गुलाम बनाकर रखने के लिए समाजवाद को थोपने का प्रयास किया तो डॉ अम्बेडकर ने अपने राजनैतिक स्वार्थ के लिए सामाजिक एकता को छिन्न भिन्न करने में अपनी पूरी शक्ति लगाई। यदि नेहरु और अम्बेडकर की आपस में तुलना करें तो पंडित नेहरु की नीतियॉ गलत थीं किन्तु नीयत पर अभी संदेह नहीं किया जा सकता तो भीमराव अम्बेडकर की नीतियॉ भी गलत थी और नीयत भी। यदि हम वर्तमान समय में ठीक ठीक आकलन करे तो पंडित नेहरु का यथार्थ समाज के समक्ष स्पष्ट होने लगा है किन्तु भीमराव अम्बेडकर का कलंकित यथार्थ अभी सामने आना बाकी है भारत की वर्तमान परिस्थितियॉ राजनैतिक सत्ता को मजबूर कर रही है कि वे अम्बेडकर जी को अल्पकाल के लिए महापुरुष ही बने रहने दें। मेरे विचार में गांधी और आर्यसमाज भारत की वर्तमान सामाजिक समस्याओं का समाधान चाहते थे तो भीमराव अम्बेडकर

उन सामाजिक समस्याओं को उभार कर उससे अपना राजनैतिक हित पूरा करना चाहते थे। अम्बेडकर जी पर भविष्य में मंथन का नया विषय रखकर विस्तृत चर्चा होगी।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था वर्तमान समय में तीन तरफ से आक्रमण झेल रही है। (1) साम्यवाद (2) दारुल इस्लाम (3) पाश्चात्य संस्कृति। भारत में साम्यवाद का पतन शुरु होते ही साम्यवाद और दारुल इस्लाम ने हाथ मिला लिया और वह सबसे बडा खतरा बन गया। यदि राजनैतिक तौर पर तीन श्रेणियां मान ले (1) शत्रु (2) विरोधी (3) प्रतिस्पर्धी। तो साम्यवाद शत्रु, दारुल इस्लाम विरोधी और पाश्चात्य संस्कृति को प्रतिस्पर्धी में रखा जा सकता है। शत्रु हमारे विरोधी की सहायता में आ गया है। ऐसी परिस्थितियों में भारत को यह रणनीति बनानी होगी कि हम आपातकाल समझकर अपने प्रतिस्पर्धी के साथ समझौता करके विरोधी से मुकाबला करें। मुझे लगता है कि भारत सरकार पूरी बुद्धिमानी के साथ इस दिशा में आगे बढ रही है। किसी भी मामले में या तो तटस्थ भूमिका अपनाई जा रही है अथवा अमेरिका की तरफ झुकी हुई। हमारे कुछ मित्र यदा कदा ना समझी में अमेरिका की अनावश्यक और ऐसी आलोचना कर देते है जो किसी न किसी रुप में साम्यवाद दारुल इस्लाम की सहायक हो जाती है। हमें रणनीति के अन्तर्गत ऐसी आलोचनाओं से यथार्थ होते हुए भी बचना चाहिये। इसी तरह यदि हम हिन्दुत्व को भारतीय समाज व्यवस्था के साथ जोडकर देखें तो संघ के कार्य हिन्दुत्व की सुरक्षा में तो सहायक है किन्तु विस्तार में बाधक। राष्ट्रवाद भारतीय समाज व्यवस्था के लिए बहुत घातक है किन्तु वर्तमान समय में साम्यवाद और दारुल इस्लाम के खतरे को देखते हुए हमें संघ और उसके राष्ट्रवाद को शक्ति देने के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं है।

सामाजिक आपातकाल है। इसका समाधान खोजना होगा। हमारी भारत की राजनैतिक व्यवस्था किस दिशा में करवट लेगी यह अभी स्पष्ट नहीं है। सकारात्मक चार दिशाये होती है– (1) प्रशंसा (2) समर्थन (3) सहयोग (4) सहभागिता। वर्तमान शासन व्यवस्था समस्याओं का समाधान कर पायेगी ऐसे लक्षण दिख रहे है किन्तु यह स्पष्ट नहीं दिखता कि समाज का अस्तित्व सदा सदा के लिए राज्य में विलीन हो जायेगा अथवा राज्य शासक की जगह प्रबंधक की ओर बढेगा। ऐसी परिस्थिति में हमें सतर्क दृष्टिकोण अपनाना होगा। जब तक यह साफ नही दिखे कि भारत विचार मंथन की दिशा में बढ रहा है, तानाशाही और लोकतंत्र की जगह लोकस्वराज्य की ओर जा सकता है, तब तक हमे राज्य से सहभागिता नहीं करनी चाहिये। प्रशंसा,समर्थन और कभी कभी सहयोग भी किया जा सकता है किन्तु सहभागिता नहीं। यदि साम्यवाद और दारुल इस्लाम का गठजोड कमजोर नहीं होता है तो हमें राज्य का सहयोग करना चाहिये, भले ही समाज की जगह राष्ट्र ही क्यों न मजबूत होता हो। किन्तु यदि खतरा कमजोर होता है तो हमें राष्ट्रवाद और तानाशाही प्रवृतियों से दूरी बनाकर एक सत्ता निरपेक्ष तथा सामाजिक शक्ति को मजबूत करना चाहिये। हमें पश्चिम की सांस्कृतिक आंधी का विरोध न करके प्रतिस्पर्धा तक स्वयं को सीमित करना चाहिये। हमें सतर्क रहना चाहिए कि हम भारतीय राज्य व्यवस्था के सहभागी नहीं है और हम उस दिन की प्रतीक्षा कर रहे है जब समाज मालिक होगा और राज्य मैनेजर या प्रबंधक।

मैने सन 77 से ही यह आभास कर लिया था कि सामाजिक आपातकाल की परिस्थितियां हैं लेकिन ऐसी कोई टीम नहीं बन पा रही थी। सन 99 आते आते हम लोगों ने बैठकर भारत की वैकल्पिक संवैधानिक व्यवस्था का एक प्रारुप भी बना लिया जो आज भी मौजूद है। हम लोगों ने सन् 2000 से 2003 तक रामानुजगंज शहर में सर्वोदय के मार्ग दर्शन में नई राजनैतिक व्यवस्था का सफल प्रयोग भी किया। संविधान के प्रारुप और प्रयोग की सफलता के बाद हम सब लोगों ने 26 से 29 मार्च 2003 में सेवाग्राम में बैठकर ठाकुरदास जी बंग जी के नेतृत्व में सामाजिक आपातकाल की घोषणा की और समाधान की विस्तृत योजना बनाई। यह योजना ज्ञानतत्व कमांक 64 में विस्तारपूर्वक प्रकाशित है। उस योजना की सफलता इसलिए नहीं हो पायी कि सर्वोदय के सरकारी पदाधिकारियों ने इसका विरोध कर दिया। बाद में अन्ना जी के नेतृत्व में इस योजना पर काम शुरु हुआ और अरविंद केजरीवाल के धोखा देने के बाद वह काम रुक गया। अब 2015 के अक्टूबर माह से इस सामाजिक आपातकाल के समाधान की दिशा में निरंतर विस्तार हो रहा है। स्पष्ट है कि सामाजिक आपातकाल है और समाज सर्वोच्च की भूख आम लोगों में पैदा करनी होगी। परिस्थितिवश कुछ शक्तियों से समझौते भी करने पड सकते है किन्तु लक्ष्य स्पष्ट रखना होगा। जब तक हम राज्य को सारी दुनिया से और विशेषकर प्रारंभ में भारत से संरक्षक की जगह पर प्रबंधक नहीं बना लेते, तब तक हम शांति से नहीं बैठेंगे। इसके लिए हमें जो नीतियां बनानी होगी वो बैठकर बनायेंगे। क्योंकि लक्ष्य हमारा स्पष्ट है और उसे पूरा करके ही रहेंगे। अब तक की संभावित योजना अनुसार 2024 तक सफलता की संभावना दिखती है। भविष्य क्या होगा यह हम आप सबकी सूझबूझ और सक्रियता पर निर्भर करेगा।

मंथन कमांक 31

कश्मीर समस्या और हमारा समाज

कुछ बातें स्वयं सिद्ध हैं–

1 समाज सर्वोच्च होता है और पूरे विश्व का एक ही होता है अलग अलग नहीं। भारतीय समाज सम्पूर्ण समाज का एक भाग है, प्रकार नहीं।

2 राष्ट्र भारतीय समाज व्यवस्था का प्रबंधक मात्र होता है अर्थात समाज मालिक होता है और राष्ट्र मैनेजर।
3 राष्ट्र कई प्रकार के होते है लोकतांत्रिक,तानाशाही,इस्लामिक,धर्मनिरपेक्ष आदि। राष्ट्र और देश लगभग समानार्थी होते है।
4 राष्ट्र की एक सरकार होती है,व्यवस्था नहीं। समाज की एक व्यवस्था होती है,सरकार नहीं।

कश्मीर की समस्या भारत की राष्ट्रीय समस्या है,सामाजिक नहीं। कश्मीर भारत में रहे या पाकिस्तान में या स्वतंत्र यह समाज का विषय नहीं है क्योंकि यह सामाजिक समस्या नहीं है किन्तु यह राष्ट्र और सरकार के लिए चिंता का विषय है।

इसलिए कश्मीर की बिगडती हुई स्थिति से सरकार अधिक चिंतित है,समाज कम। यदि हम सामान्य रुप से विचार करें तो यह बात न्याय संगत लगती है कि जब कश्मीर के लोग पाकिस्तान के साथ जुडना चाहते है और उसके लिए मरने मारने को तैयार है तो हम उन्हे क्यों बलपूर्वक तकनीकी आधार पर अपने साथ रखने का प्रयास करें। स्पष्ट दिख रहा है कि कश्मीर को भारत में बनाये रखने में भारत के नागरिकों को बहुत अधिक खर्च करना पडता है। वह खर्च सैनिक भी होता है और उनकी व्यवस्था पर भी। विश्व स्तर पर भी कश्मीर को साथ रखने से देश का कोई बहुत अधिक सम्मान नहीं बढता । इसलिए क्यों न कश्मीर में जनमत संग्रह की बात मान ली जाये। सामान्यतया तो यह तर्क उचित दिखता है किन्तु यदि व्यावहारिक धरातल पर आकलन करें तो कश्मीर समस्या भावनात्मक नहीं बल्कि वास्तविक है। कश्मीर समस्या भारत और पाकिस्तान के बीच की कोई भूभाग तक सीमित समस्या नहीं है, जैसा कि आमतौर पर लोग मानते है। मेरे विचार में तो पाकिस्तान इसमें कोई पक्षकार है ही नहीं बल्कि वह तो इस्लामिक देश होने के नाते तथा इस विवाद में लाभ उठाने तक सीमित है। वास्तविक समस्या इस्लामिक विस्तारवाद से जुडी है। सारी दुनिया में जिस तरह दारुल इस्लाम के संगठित प्रयास हो रहे है उन प्रयासों में भारत का कश्मीर एक ऐसा क्षेत्र है जो वर्तमान में उस प्रयास को रोकने का युद्ध क्षेत्र है। कटटरपंथी इस्लाम में सारी दुनिया में युद्ध के अलग अलग फ्रंट खोल रखे है। कश्मीर उनमें से मात्र एक है। ऐसी बात नहीं है कि कश्मीर छोड देने से इस्लामिक कटटरवाद से भारत को मुक्ति मिल जायेगी। बल्कि उससे ठीक आगे बढकर एक नया टकराव का क्षेत्र खुल जायेगा और हम कमजोर हो जायेंगे । यह भ्रम है कि कश्मीर विवाद तकनीकी कारणों से है। सच्चाई यह है कि कश्मीर विवाद इस्लामिक विस्तारवाद का एक युद्ध क्षेत्र है और वह भारत के लिए जीवन मरण का प्रश्न है । यही कारण है कि कश्मीर मुददे पर मैं भारत पाकिस्तान के बीच अथवा न्याय अन्याय के बीच कोई विचार नहीं करना चाहता। बल्कि मैं इस बात से सहमत हूँ कि किसी भी स्थिति में कश्मीर को भारत में बनाये रखना चाहये।

मैं जानता हूँ कि दुनिया में मुसलमान कभी किसी भी परिस्थिति में सहजीवन को स्वीकार नहीं करता । यदि वह कमजोर होता है तो दबकर मजबूत होने की प्रतिक्षा करता है और मजबूत होता है तो दबाकर दूसरे के समाप्त होने का प्रयत्न करता है।वह हर समय मरने मारने के लिए तैयार रहता है। वह अनंतकाल तक लडने में विश्वास करता है क्योकि वह इसे धर्म युद्ध समझता है। इस तरह यह सोचना ही व्यर्थ है कि कश्मीर के मुस्लिम बहुमत को कभी समझाया जा सकता है। क्योंकि वह समाज से भी उपर और राष्ट्र से भी उपर अपने धार्मिक संगठन को मानता है जिसका बहुत बडा हिस्सा भारत के बाहर रहता है।

विचारणीय यह है कि भारत सरकार को क्या करना चाहिये और भारतीय समाज को क्या करना चाहिये। भारतीय सरकार के लिए तो यह स्पष्ट है कि उसे साम दाम दण्ड भेद किसी भी तरीके से कश्मीर को भारत का अभिन्न अंग बनाये रखना चाहिये। किन्तु सामाजिक आधार पर कुछ स्थिति जटिल है। भारत में 95 प्रतिशत ऐसे लोग है जिन्हें अपनी रोजी रोटी की चिंता है और वे इन मुददों पर ध्यान नहीं दे पाते। पांच प्रतिशत ऐसे लोग है जो इन मुददों पर सोचते है । इनमें कुछ विचारक कुछ रिटायर्ड लोग तथा अधिकांश राजनेता या उनके कार्यकर्ता शामिल होते है। ये लोग दो विचारधाराओं में बटे हुये है। एक वे है जो अप्रत्यक्ष रुप से वामपंथी इस्लामिक संगठनों से सहानुभूति रखते है। ऐसे सभी लोग दिन रात बिना मांगे सरकार को कश्मीरियों से बातचीत की सलाह देते है। ये लोग इससे भी आगे बढकर पाकिस्तान से भी बातचीत के लिए निरंतर दबाव बनाये रखते है।ये अपने को धर्मनिरपेक्ष कहते है किन्तु होते है पूरी तरह अल्पसंख्यक समर्थक। दूसरा समूह उन लोगों का है जो अपने को राष्ट्रवादी कहते है। ऐसे लोग बिना मांगे सरकार को हिंसा करने की सलाह देते रहते है। इन्हे न विश्व समीकरण की चिंता है न ही जीत हार की। ये तो सिर्फ मार दो कुचल दो के अलावा कुछ अन्य बोलते ही नहीं। ऐसे लोग अपने शहर के किसी नामी गुण्डे के खिलाफ गवाही तक नहीं दे सकते किन्तु अपने शहर में पाकिस्तानी राष्ट्रपति का पुतला जलाने में बहुत उछलकूद करते दिखते हैं। यदि कश्मीर में या पाकिस्तान के बार्डर पर पांच सैनिक शहीद हो जाते हे तो इन नकली राष्ट्रवादियों की उछलकूद देखते ही बनती है। भले ही अगर डाकू हमारे जिले के पांच लोगों की हत्या कर दे तो इनकी सकियता नहीं दिखती। ये दोनों ही विचारधाराओ के लोग गलत है तथा वास्तविक समस्या से ध्यान हटाते है। यदि ये आपस में लडते रहे तो कोई बहुत बडा नुकसान नहीं होता किन्तु ये आपस में तो सिर्फ मौखिक लडाई लडते है और उसका नुकसान शांतिप्रिय लोगों को उठाना पडता है।

मैं मानता हूॅ कि सैनिक भी हमारी सुरक्षा के लिए ही नियुक्त है और उनका भी बहुत महत्व है किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि किसी सैनिक और किसी गांव के किसान या मजदूर के बीच में अन्ययापूर्ण अंतर होना चाहिये। एक सैनिक,एक प्रोफेसर,एक डाक्टर,एक वैज्ञानिक और एक गंभीर विचारक के बीच में सबका अलग अलग महत्व है। सिर्फ सैनिक का ही नहीं। एक सैनिक की मृत्यु पर यदि एक करोड रुपया दिया जाता है तो किसी ग्रामीण को हाथी या सरकारी भालू द्वारा मार दिये जाने पर दो लाख रु. इस तरह दिया जाता है जैसे कोई जूठन दी जा रही हो। जबकि वह सैनिक उस ग्रामीण के दिये हुए टैक्स से ही अपने दायित्व पूरे करता है। मैं नहीं समझता कि अंतर इतना क्यों होना चाहिये। जब सैनिक राष्ट्र के लिए प्राण न्यौछावर करते है तो फिर वे जंतर मंतर पर धरना क्यों देते है।क्या उन्हे प्राप्त सुविधायें भारत के औसत नागरिकों से कम है। यदि वे यह सोचते है कि जिस तरह राजनेता दोनों हाथों से देश को लूटते रहे है उसी तरह उन्हे भी उसका हिस्सा चाहिए तब तो उनके प्रदर्शन का कुछ औचित्य है अन्यथा मैं नहीं समझता कि सैनिकों को प्राप्त सम्मान कम है और अपनी सम्मान वृद्धि के लिए उन्हें अतिरिक्त प्रयास करने चाहिए। जिस तरह एक सैनिक ने अपने कार्य की चिंता छोडकर खाने की थाली दिखाने का नाटक किया तथा उसे अनावश्यक महत्व मिला अथवा जिस तरह किसी सैनिक की लाश को जाते समय मुख्यमंत्री की गाडी को भी रोक देनी की सलाह दी गई अथवा जिस तरह किसी सैनिक की मृत्यु पर अलग अलग सहायता देने की सरकारों में होड मच जाती है यह मुझे लगता है कि राष्ट्रभक्ति का नकली नाटक मात्र हैं। उससे तो वास्तव में यह विचार बनता है कि इनमें कितनी राष्ट्र भक्ति है और कितनी नौकरी।

कश्मीर के लिए कुछ राजनेताओं के दलाल अथवा राष्ट्र भक्त लोग सारे देश भर में वातावरण बनाते है वह भी बहुत हानिकारक है। उससे हमारी सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक समस्या पर से ध्यान बट जाता है।हमने कश्मीर समस्या के सुलझाने के लिए एक सरकार को दायित्व दे दिया है। सरकार पर हमें विश्वास है कि उसकी नीयत ठीक है तो हमें उस मामले में क्यों बार बार चिंता व्यक्त करनी चाहिये। हमने एक गाडी चलाने के लिए ड्राईवर रखा हुआ है और ड्राईवर ठीक तरीके से बल्कि मालिक से भी अच्छा गाडी चलाने जानता है। तो हमें बार बार उस ड्राईवर को गाडी चलाते समय क्यों सलाह देनी चाहिये। ऐसी सलाह प्रायः नुकसान करती है। जब न तो सरकार सलाह मांग रही है न ही सेना सहायता मांग रही है तो हमें अनावश्यक देश भर में वातावरण खराब नहीं करना चाहिये। सरकार यदि बातचीत करना ठीक समझती है तब भी ठीक है और यदि वह टकराना चाहती है तब भी ठीक है । क्या करना है यह उसके उपर निर्भर है।

मैं समझता हूॅ कि कश्मीर समस्या इस्लामिक कट्टरवाद से जुडी हुई है पाकिस्तान से नहीं। ऐसी स्थिति में यदि हम भारत के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच आपसी संबंधों को शांतिपूर्ण बनाये रखने की मिसाल पेश कर सके तो वह मिसाल कश्मीर समस्या के मामले में भारत के लिए कवच का काम करेगी । क्या बिगड जायेगा अगर दो चार वर्ष गायों का आन्दोलन और विलंबित हो जाये। क्या बिगड जायेगा अगर मंदिर का आन्दोलन भी कुछ और बाद में हो जाये। अभी सरकार बनी है और हम भारत के लोग अपना सहजीवन का सिद्धांत छोडकर भारत के मुसलमानों से बदला देने की जल्दबाजी शुरु कर दे तो यह हिन्दुत्व की मूल अवधारणा के तो विरुद्ध है ही साथ ही इसका कश्मीर समस्या पर निश्चित ही बुरा असर पडेगा। क्या यह उचित नहीं होगा कि हम कश्मीर से बाहर की अपनी हिन्दू मुस्लिम समस्या को सरकारी स्तर पर स्वाभाविक रुप से निपटने दे। कोई ऐसा पहाड नहीं टुटने वाला है कि भारत मुस्लिम राष्ट्र बन जायेगा। इतना ही तो होगा कि भारत हिन्दू राष्ट्र न बनकर धर्म निरपेक्ष रह जायेगा । अब वह स्थिति कभी नहीं आने वाली है जैसा 70 वर्षो तक हुआ और भारत सरकार ने भारत के मुसलमानों को अधिक महत्व देकर हिन्दुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रखा। जो लोग ऐसा समझते है कि हिन्दू मुस्लिम एकता हो ही नहीं सकती वे भ्रम में है। वे जाकर ऐसा प्रयोग रामानुजगंज में जाकर देख सकते है जहॉ कटटरपंथी हिन्दू और मुसलमान सामाजिक एकता के समक्ष पूरी तरह दबे हुये है।

अंत में मेरी तो सही सलाह है कि भारत के लोगों में किसी भी प्रकार की धार्मिक उत्तेजना हिन्दुओं और मुसलमानों के लिए भी गलत है, देश के लिए भी गलत है और समाज के लिए भी। साथ ही हमारी यह उत्तेजना कश्मीर समस्या पर भी बूरा प्रभाव डालती है। भले ही हम भारत के मुसलमानों के खिलाफ नारे लगावे या कश्मीरी आन्दोलन के खिलाफ। हम यदि अपनी स्थानीय सामाजिक व्यवस्था को ठीक से चला ले और सरकार को राष्ट्रीय या कश्मीर समस्या से निपटने के लिए खुली छूट दे दे तो भले ही हमारे अहम की तुष्टि न हो किन्तु हमारा भारत स्वर्ग बन सकता है ऐसा मुझे दिखता है।

ग्राम संसद अभियान

पिछले माह नोयडा में व्यवस्थापक का राष्ट्रीय अधिवेशन सम्पन्न हुआ। मैं अधिवेशन में पूरे समय एक मुख्य सलाहकार के रुप में उपस्थित रहा। अधिवेशन में तय हुआ कि जन जागरण का नाम ग्राम संसद अभियान होगा। अभियान जनजागरण तक सीमित होगा तथा किसी भी परिस्थिति में किसी कानून का उल्लंघन नहीं किया जायेगा। मुझे उचित

लगा कि में ग्राम संसद के स्वरुप पर कुछ स्पष्ट करुॅ। मैं स्पष्ट कर दूॅ कि यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव मात्र है, संस्था का अधिकृत नहीं।

ग्राम संसद का संक्षिप्त अर्थ होता है प्रत्येक ग्राम/वार्ड सभा को अपना आंतरिक संविधान बनाने और कार्यांवित करने की स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीय संविधान संशोधन में महत्वपूर्ण भूमिका । यही ग्राम संसद अभियान का एक मात्र लक्ष्य है।

वर्तमान स्थिति

- किसानों के पसीने और कांतिकारियों के खून की बदौलत आज़ादी की देवी अंग्रेजों की कैद से जैसे ही मुक्त हुई, हमारे नेताओं ने उसे संसद में बंद कर दिया, जबकि करोड़ों लोग अपने घरों पर उसका स्वागत करने के लिए आंखें गड़ाए खड़े थे। वो आज तक उससे महरूम हैं ।

- गांधी, तिलक और सुभाष सरीखे स्वतंत्रता सेनानियों ने अंग्रेजों की कैद से आज़ादी की देवी को मुक्त तो करा दिया, लेकिन वो संसद में आकर उलझ गई। गांधी उसे गांव तक लाते ,परिवारों तक लाते, उससे पहले ही उनकी हत्या कर दी गई। जेपी ने कोशिश की, लेकिन वो सिरे नहीं चढ़ पाई, अन्ना के पीछे खड़े लोगों की नीयत में खोट निकला, जाहिर है, जब तक हम सब स्वयं भगीरथ बन काम नहीं करेंगे, तब तक व्यक्ति परिवार और गांव को लोकतंत्र की धुरी बनाना मुश्किल होगा।

- गुलामी की कोख से पैदा हुआ ये लोकतंत्र साम्राज्यवाद की मानसिकता से निकलने के लिए छटपटा रहा है। वक्त आ गया है, उस आदर्श को छूने का, जिसमें हर व्यक्ति का वजूद तय हो।

- संविधान की प्रस्तावना के मुताबिक हम भारत के लोग ही इस देश के असली मालिक हैं, भारत के भाग्यविधाता हैं।

- गोरे शासकों से मुक्ति के बाद नेताओं ने आजादी के नाम पर लोगों को आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक अधिकार तो दे दिए, लेकिन राजनीतिक समानता के अधिकार को चुपके से दबा लिया, परिणाम स्वरूप आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक अधिकार भी संसद की दया पर निर्भर हो गये।

- देश चलाने के लिए हम सांसदों को पांच साल के लिए नियुक्त करते हैं,निश्चित ही वो शासक नहीं सेवक हैं। लेकिन अगर आप उनसे कहें कि एक साल के लिए ये देश हम सीधे अपने हाथों से चलाना चाहते हैं तो ज़रा सोचिए कि उनका उत्तर क्या होगा।

- ये भी निष्कर्ष निकाला गया कि ''कोई सरकार कितनी भी अच्छी क्यों ना हो मगर अपनी सरकार से अच्छी नहीं हो सकती'' इसलिए सवाल अच्छी सरकार का है ही नहीं अपनी सरकार का है।

- हमारे देश के तंत्र अर्थात राज्य को लोक अर्थात समाज का प्रबंधक या मैनेजर तक सीमित रहना चाहिये था किन्तु वे संरक्षक अर्थात अप्रत्यक्ष मालिक बन गये।

अपनी सरकार का मतलब आपकी और मेरी सरकार, हर घर की सरकार। यद्यपि यह सपना सरीखा है पर आप चाहें तो चार कदम साथ साथ चलने से ये साकार भी हो सकता है, ये सपना है गांव की आज़ादी का। सवाल ये नहीं है कि आप आज़ादी से क्या समझते हैं, सबसे बड़ा सवाल ये है कि आज़ादी होती क्या है ?

आज़ादी की देवी

..... आज़ादी मेरे और आपके मन में बसती है, परंतु जब हमारी निर्णय करने की शक्ति को छीन लिया जाता है, तो हमारे मन की ये देवी भी गुलाम हो जाती है। दरअसल अंग्रेजों के जाने के बाद लोगों को भी स्वातंत्र का स्वाद चखना था, लेकिन हमारे बड़ों ने चुपके से संविधान के नाम पर देश के लोगों पर ठीक उसी तरह से राज करना शुरू

कर दिया जिस तरह से अंग्रेज कर रहे थे। वही पुलिस, वही न्याय प्रणाली, लोगों को अगर कुछ मिला तो वो वोट के जरिए लोगों को चुनने की मजबूरी। इस मजबूरी को उन्होंने वोट का अधिकार बताया और हम भी मान गए...

आज़ाद कौन ?

15 अगस्त 1947 को देश तो आज़ाद हुआ, लेकिन समाज आज तक आज़ाद नहीं हुआ। आज़ादी के प्रसाद को, जो देश के हर परिवार को मिलना चाहिए था, उसे संसद ने थोड़ा बहुत विधानसभा में बैठे विधायकों में बांटकर पूरा अपने पास रख लिया। गांव तो उससे आज तक वंचित हैं।

आज़ादी का अर्थ

विचार करने, निर्णय लेने और उसे लागू करने की शक्ति को ही आजादी कहा जाता है। देश की संसद के पास ये शक्ति है, विधानसभाओं के पास ये शक्ति है, हम गांव के लोग चाहते हैं कि गांव को भी ये शक्ति मिले, ताकि वो भी मिलजुल कर अपने गांव के बारे में कोई भी निर्णय ले सकें।

सरकार कौन ?

हम सरकार हैं, संसद और विधानसभाओं से लेकर ग्राम प्रधान तक सब जनप्रतिनिधि हैं।सरकार होने का ये हक हमें किसी और किसी से नहीं बल्कि संविधान से मिला है । सरकार संविधान से चलती है, संविधान के पहले तीन शब्दों में ही लिख दिया हम भारत के लोग, यानि वी द पीपुल ऑफ इंडिया। यहीं से संविधान शुरू होता है, उसे हमारी इच्छा का आइना ही होना चाहिए, यानि जैसा हम देखना चाहते हैं, वैसा ना कि जैसा नेता चाहते हैं, संसद चाहती है, तंत्र चाहता है वैसा।

मुक्ति का मंत्र दो..

दरअसल अब तो सवाल अधिकारों का नहीं मुक्ति का है, आज़ादी का है। जिन्हें अभी तक आज़ादी नहीं मिली, उनके लिए अधिकार, लोकतंत्र या स्वातंत्र का कोई मतलब नहीं। ये तभी संभव होगा जब, गांव से जुड़े हर मामले में फैसले लेने का अधिकार गांव के लोगों को मिले । उसे हर वो अधिकार हो, जो वो कर सकते हैं। गांव जिसे ना कर सके, उस काम को ही जिला या केंद्र को दे दे। यानि गांव के दायरे में गांव वालों के जरिए, गांव के लिए जब फैसले लेने का यानि कानून बनाने, और उसे लागू करने का अधिकार नहीं मिल जाता, उससे पहले आज़ादी की तमाम बातें जन–मन–गण के लिए गौण हैं।

ग्राम संसद

ग्राम संसद का विचार कुछ ऐसा ही है जैसे आप अपनी फैक्ट्री को अपने मैनेजर के बजाय खुद चलाना शुरू कर दें और मैनेजर कहे कि आप ऐसा नहीं कर सकते। दरअसल हमें अपनी सरकार और अच्छी सरकार में फर्क करना सीखना होगा। सोचना होगा, और उसे अंजाम तक पहुंचाना होगा। तब विकसित लोकतंत्र की जड़ें हर परिवार तक पहुंची होंगी। तब हमारा अधिकार सिर्फ चुनने तक नहीं, वरन फैसले लेने तक होगा। यानि अपना गांव चलाने से लेकर, संविधान संशोधन की प्रकिया तक में ग्राम संसद की भूमिका तय होगी। स्पष्ट हुआ कि वर्तमान परिस्थितियों में राज्य और समाज के वर्तमान एकपक्षीय स्वरुप में व्यापक संशोधन होना चाहिये। यही इस अभियान का लक्ष्य है। ग्राम संसद अपना संविधान बनाने के लिए पूरी तरह स्वतंत्र होगी। परिवार का ढांचा कैसा हो, मतदान का तरीका क्या हो, संचालन कैसा हो, यह सब ग्राम सभा अपने आंतरिक तथा राष्ट्रीय संविधान के माध्यम से तय करने को स्वतंत्र होगी। हम लोग तो व्यक्तिगत रुप से उसे सुझाव मात्र दे सकते है।

इन सुझावों पर कुछ वक्ताओं ने अपने विचार भी रखे जिनमें रामवीर जी श्रेष्ठ,चन्द्रशेखर प्राण जी मुख्य थे। कुछ मैने भी अपनी बात रखीं। सबका संक्षिप्त सार इस प्रकार था–

ग्राम संसद कैसी हो ?

लोकतंत्र पर पहला अधिकार वोटर का है, हम चाहते हैं कि गांव की सरकार यानि तीसरी सरकार चलाने के लिए हर परिवार की हिस्सेदारी सुनिश्चित हो, जिसमें हर परिवार का प्रतिनिधि भाग ले। यानि ग्राम संसद में हर घर लोकतंत्र में जिम्मेदारी, समझदारी और ईमानदारी के साथ भागीदारी करे।

- परिवार ही लोकतंत्र की धुरी हों, ग्राम संसद में परिवार सांसद ही प्रस्ताव लाये, चर्चा करे, फैसले लें और उन्हें लागू भी करे।

- ये 25 करोड़ परिवार अपने अपने गांव और वार्डों को आसानी से चलाऐं, लगातार आगे बढ़ाऐं, असली भाग्यविधाता बनें। इस तरह आपका परिवार भी इस व्यवस्था में शामिल होगा।

व्यवस्था के लिहाज से, बड़े गांव जिनमें परिवारों की संख्या 200 से ज्यादा है, ऐसे गांवों में कुल प्रतिनिधि को ग्राम संसद का सदस्य बनाया जा सकता है। 200 से कम होने पर परिवार प्रतिनिधि सीधे ग्राम संसद के सदस्य हों। कुल में शामिल सदस्य परिवारों की संख्या 5 से लेकर 25 तक कुछ भी हो सकती है, या ग्राम सभा जैसा चाहे ....

लेकिन प्रस्ताव जिस परिवार प्रतिनिधि का हो उसे ही रखने का अधिकार होगा, कुल प्रतिनिधि का काम महज वोट देना होगा,। एक कुलपति के वोट देने का मतलब होगा, उन सभी 20 परिवारों के मतदाताओं के वोट देना, किंतु, अगर कोई परिवार प्रतिनिधि या मतदाता अपनी वोट अलग देना चाहता है तो वो ऐसा कर सकता है। दरअसल ऐसा करने से ही मानव मात्र की गरिमा की सुरक्षा कर पाऐंगे।

यदि कुल प्रतिनिधि बैठक में शामिल ना हो सके तो वो कुल में शामिल किसी भी परिवार के प्रतिनिधि को वॉर्ड संसद में सबकी वोट देने के लिए कह सकता है। दरअसल वार्ड संसद की बैठक में कुल के सदस्य चक्रीय तौर से हिस्सा लें, यानि पहली बैठक में पहले परिवार का प्रतिनिधि कुल का प्रतिनिधि बनकर जाए तो दूसरी में दूसरे... और 20 वीं बैठक में 20 वें परिवार का सदस्य ग्राम संसद में हिस्सा ले।

ग्राम संसद का आधार

- ग्राम सभा यथावत रहे, ग्राम पंचायत की जगह हर परिवार से 1 सदस्य लेकर ग्राम संसद की स्थापना की जाए।

- कामों के हिसाब से ग्राम संसद 3–3 लोगों को समितियां नामित करे।

- संसद देश और विधानसभाऐं राज्यों के लिए योजनाऐं बनाऐं। वहीं गांव के लिए ग्राम संसद ही योजनाओं पर विचार करे, निर्णय ले, और उन्हें लागू करे।

- गांवों को योजनाऐं ना देकर उन्हें आबादी के हिसाब से उनके हिस्से का बजट दिया जाए जिसका उपयोग ग्राम संसद सर्वसम्मति से करें।

ग्राम संसद सबकी उपस्थिति और सबकी सहमति के आधार पर काम करे, यानि

- ग्राम संसद में एक भी सदस्य अनुपस्थित हो तो प्रस्ताव को पास न माना जावे।

- अगर एक भी सदस्य प्रस्ताव का विरोध कर दे तो भी प्रस्ताव को पारित न माना जाए ।

ग्राम संसद में जरूरत के हिसाब से समितियों को नामित किया जा सकता है। जैसे, वित्त समिति, लेखा समिति,निगरानी समिति, सुरक्षा, न्याय, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, आवास, पर्यावरण, पानी और कृषि समिति, जो जो भी हो सकता है, वो 29, 30 या 300 तरह के काम हो सकते हैं, अगर वो दूसरे गांव के अधिकारों का अतिक्रमण नहीं है तो सब किया जा सकता है।

संविधान संशोधन की प्रक्रिया में ग्राम संसद की भूमिका

आम भारतीय मानता है कि ''जब हम संविधान बना रहे थे तब अंग्रेज हमारे सर पर बैठे हुए थे, नतीजा, ऐसे हजारों कानून ऐसे ही रह गए, जैसा वो छोड़कर गए थे'' नतीजा संविधान मंथन की जरूरत है। हालांकि अटल जी ने इसकी शुरूआत की थी, हमारा सुझाव है कि देश की ये 10 लाख ग्राम और वार्ड संसदों के 25 करोड़ प्रतिनिधि, 543 लोगों की एक संविधान सभा का चुनाव करें, ये संविधान सभा संविधान में जो सुधार करे, संसद उनका अनुमोदन करे, या उसे अपनी बात से सहमत कर ले। अगर दोनों के बीच किसी मसले पर विवाद हो जाए ये 25 करोड़ परिवार प्रतिनिधि जनमत संग्रह से फैसला करें। हमारा तो यह भी सुझाव है कि यदि वर्तमान संविधान में तत्काल कोई संशोधन करना हो तो भी ग्राम सभाओं की सहमति अनिवार्य कर देनी चाहिये।

रामवीर जी तथा चन्द्रशेखर प्राण जी के प्रस्ताव पर कुछ चर्चा भी हुई और चर्चा आप सब के बीच में भविष्य में भी चलती रहेगी। क्योकि उपरोक्त स्वरुप ग्राम संसद को दिये जाने वाले विभिन्न सुझावों में से एक है। किन्तु यह निश्चित है कि ग्राम संसद का लक्ष्य संवैधानिक तरीके से पूरा करना हम आप सब की सर्वोच्च प्राथमिकता है।

हमारी तैयारी कितनी ?

मान लिया संसद ने आपके गांव को ग्राम संसद देने का ऐलान कर दिया। अब सवाल ये है कि क्या आप अपने गांव को मिलजुलकर भाईचारे के साथ चलाने के लिए तैयार हैं? क्योंकि अब कोई और चारा बचा नहीं है। अगर अब भी नहीं संभले तो यकीन मानिए संभलने का मौका तक नहीं मिलेगा। जैसे ही भनक लगे, इस अभियान का हिस्सा बन जाइए, ये किसी के मुख्यमंत्री और प्रधानमंत्री बनाने का रास्ता नहीं है, हमें सिर्फ और सिर्फ हमारा गांव चाहिए। एक बात और है कि अगर अपना गांव भी सलूक और सलीके से नहीं चला पाए तो देश क्या खाक चलाऐंगे। हजारों सालों से तो हम चल ही रहे हैं, आओ इस गाड़ी की ड्राइविंग सीट पर भी बैठ लें, और वहां चलें, जहां, आसमान और भी हैं। उम्मीद है कि हम भगीरथ बन कर मोदी जी को मना लेंगे, बस, आप तो अपनी तैयारी करें, और शंकर सा संकल्प लेकर उस ताकत को संभालने के लिए तैयार रहें है, जो आपकी नियती है

हमारा संदेश

हर पार्टी हमें अच्छी सरकार देने का वादा करती है, बड़ा सवाल ये है कि अगर अच्छी सरकार आ भी गई तो उसकी असली मंशा हमें अच्छी भीड़ बनाने की होगी, ना कि ये मानने की देश के सवा सौ करोड़ लोग ही इस देश के असल मालिक हैं। अच्छी सरकार लोगों के लिए सोने का पिंजरा तो बना सकती है लेकिन सोचने और उड़ने की आजादी नहीं दे सकती। सवाल ये उठता है कि क्या आप अपनी सरकार बनाने के लिए तैयार हैं, हो सकता है कि आपको ये ख्याल महज ख्याली पुलाव लगे, पर आप चाहें तो क्या नहीं हो सकता, ये पुलाव भी पक सकता है। वो भी आपकी इच्छा भर से ।

आपका बजरंग मुनि
9617079344

प्रश्नोत्तर

1 आचार्य पंकज जी

प्रश्नः—नक्सलवादियों ने छ0ग0 में 25 सैनिकों की हत्या कर दी । आप इस संबंध में क्या सोचते है और क्या जानते है।

उत्तरः— करीब तीन महीने पहले ही हम मंथन के अन्तर्गत नक्सलवाद पर विस्तार से चर्चा कर चुके है। उस समय मैंने लिखा था कि नक्सलवाद लगभग अंतिम चरण में है। किन्तु उसके शीघ्र बाद ही परिस्थितियां बदली और एकाएक नक्सलवाद चर्चा का विषय बन गया। इसलिए मैंने उचित समझा कि तात्कालिक परिस्थितियों को देखते हुए मैं आचार्य पंकज के प्रश्नों का उत्तर दूँ।

नक्सलवाद के विषय में मैं अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक अच्छी जानकारी रखता रहा हूँ। 20 वर्ष पहले म0प्र0 सरकार ने मुझे नक्सलवादी घोषित कर दिया था और मैं उच्चन्यायालय से राहत पा सका। 2000 के आसपास नक्सलवादियों को एक समूह ने मेरी हत्या का आदेश दे दिया था और नक्सलवादियों के दूसरे समूह ने मेरी सुरक्षा की थी। सर्वोदय का भी बंग साहब सिद्ध राज जी का गुट मेरे पक्ष में था। तो कुमार प्रशांत रामचन्द्र राही म0प्र0 सरकार के पक्ष में। नक्सलवादियों से मेरा वैचारिक संवाद रहा है और मैं उनका विरोध भी करता रहा हूँ। मैं छ0ग0 के नक्सलवादी क्षेत्र का ही रहने वाला हूँ और अब भी वही रहता हूँ। मैंने बिल्कुल निकट से अपने क्षेत्र में नक्सलवाद का उत्थान और पतन देखा है। मैं झारखण्ड बार्डर का हूँ और बस्तर क्षेत्र आन्ध्र बार्डर का है।

बस्तर क्षेत्र में नक्सलवाद के उत्थान में ब्रम्हदेव शर्मा की गलती और दिग्विजय सिंह जी की सहानुभूति का बहुत बडा योगदान रहा है। ब्रम्हदेव शर्मा उस क्षेत्र को आदिवासी समूह की पहचान के रुप में बनाये रखना चाहते थे तो दिग्विजय सिंह जी नक्सलवाद में अपना राजनैतिक भविष्य तलाश रहे थे। बस्तर के लोग ब्रम्हदेव

शर्मा को आदिवासियों का मसीहा मानते थे क्योंकि आदिवासी संस्कृति की दो मुख्य पहचान है–1 पिछडापन 2 शराफत। ब्रम्हदेव शर्मा ने दोनों को बचाये रखने के लिए बस्तर के उस भू भाग को पूरे देश से अलग प्रतिबंधित क्षेत्र बना दिया जिससे वह क्षेत्र बाहर के लोगों के सम्पर्क से तो कट गया और आन्ध्र के नक्सलवादियों को वहॉ जड जमाने का अवसर मिल गया। बस्तर में जब नक्सलवादियों ने अपनी सरकार बना ली तो भारत सरकार और छ0ग0 सरकार ने वहॉ से लगभग स्वयं को बाहर कर लिया। यहॉ तक कि नक्सलवादियों को छोडकर अन्य आदिवासियों को हमारी सरकारों ने उस क्षेत्र से बाहर कैम्प लगाकर वहॉ उन्हें शरण दे दी। इस तरह उस क्षेत्र में नक्सलवादियों की अप्रत्यक्ष सरकार बन गई। वहॉ भारत का झण्डा भी कभी नहीं फहराया जाता था। यहॉ तक कि सरकार के कार्यालय भी लगभग सिमट गये थे और सिमटे जा रहे थे। वहा के व्यापारियों से नक्सलवादी टैक्स वसूलते थे और अपनी सरकार चलाते थे।

कांग्रेस पार्टी के उस समय के गृहमंत्री चिदम्बरम ने जब नक्सलवाद को समाप्त करने का बीडा उठाया था तो दिग्विजय सिंह ने राहुल गांधी को सहमत करके उन्हें ऐसा करने से रोका था। इस तरह नक्सलवाद विरोध और समर्थन की राजनीति के बीच बस्तर में निरंतर फलता फुतला रहा। नरेन्द्र मोदी की सरकार आने के बाद नक्सलवादियों के विरुद्ध ईमानदारी से प्रयास शुरु हुये। मैं आपको स्पष्ट कर दूॅ कि भारत में नक्सलवाद के विरुद्ध शिवराम कल्लूरी ही एकमात्र ऐसे अफसर माने जाते है जिन्हें नक्सलवाद समाप्त करने का पर्याप्त अनुभव और वरदहस्त प्राप्त है। कल्लूरी लक्ष्य पर ध्यान देते है, मार्ग पर नहीं। उनका व्यक्तिगत गुप्तचर विभाग बहुत मजबूत रहता है। वे कभी किसी कानून की परवाह नहीं करते और अपने टारगेट को मारने के लिए फर्जी मूठभेड का अधिक सहारा लेते हैं। उनके प्रयत्नों में हिंसा बहुत कम होती है क्योंकि वे आमतौर पर प्रत्यक्ष मुठभेडों का सहारा नहीं लेते। उनकी खास बात ये है कि वे सबसे पहले नक्सलियों के सफेदपोश मददगारों को किनारे करते है चाहे अधिक धन का लालच देकर या गैर कानूनी भय दिखाकर। उसके बाद वे नक्सलियों पर हाथ डालते है। स्पष्ट है कि उनके रहते हुए नक्सलवाद का समापन निश्चित दिख रहा था। लेकिन नक्सलवादियों ने भी अपनी सारी ताकत अपनी सुरक्षा में न लगाकर कल्लूरी को हटाने में लगा दी। उनके सारे सफेदपोश एन जी ओ, मीडिया कर्मी तथा मनवाधिकार प्रेमी पूरी ताकत से कल्लूरी के खिलाफ सकिय हो गये। कांग्रेस पार्टी ने भी इसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया। न्यायपालिका भी अपने स्वभाव के अनुरुप इसमें कूद पडी। मैं स्पष्ट कर दूॅ कि भारत की न्यायपालिका स्वयं को अपराधों और सरकार के बीच तटस्थ रुप में स्थापित करने का पूरा प्रयास करती है। इसका अर्थ होता है कि न्यायपालिका गंभीर अपराधों में अपराधियों के लिए ढाल बन जाती है। जब बस्तर के आदिवासियों के एक समूह ने सलवा जूडूम नाम से एक संगठन बनाकर सरकार को नक्सलियों के खिलाफ सहायता देनी शूरु कर दी तब न्यायपालिका बीच में न्याय करने के लिए कूद पडी। अन्यथा जब तक नक्सलवादी अत्याचार करते रहे तब तक न्यायपालिका तटस्थ भाव से बनी रही। परिणाम हुआ कि सलवाजुडूम के प्रमुख महेन्द्र कर्मा को नक्सलवादियों ने विधाचरण शुक्ल के साथ मार दिया । वैसे तो इस हत्याकांड में भी कांग्रेस पार्टी के ही एकगुट का हाथ बताया जाता है और अब तो यहॉ तक बात आ रही है कि उस हत्याकांड में शामिल कांग्रेसी गुट को अप्रत्यक्ष रुप से रमन सिंह जी ने भी बाद में सुरक्षा दी है। इस तरह चारों ओर से दबाव पडने के बाद कल्लूरी जी को हटा दिया गया और समाप्त होते नक्सलवाद को फिर से जीवनदान मिल गया।

जिस दिन यह निर्णय हुआ उसी दिन से मुझे स्पष्ट दिख रहा था कि अब नक्सलवादियों की ओर से कोई बडा कदम उठेगा और उन्होनें दो महीने में ही दो बार गंभीर घटनाऍ घटित करके फिर से सम्पूर्ण भारत में अपनी उपस्थिति का एहसास करा दिया है। स्पष्ट दिख रहा है कि समाप्त होता नक्सलवाद फिर से जीवित हो गया है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि वर्तमान में नक्सलियों ने जो हत्याकांड किया है वह नक्सलनियंत्रित क्षेत्र में किया है सरकार नियंत्रित क्षेत्र में आकर नहीं। छ0ग0 सरकार नक्सलनियंत्रित क्षेत्र में अपना विस्तार कर रही थी और उनके क्षेत्र के बीच से सडक बना रही थी जो नक्सलियों को कमजोर करती। नक्सलियों ने भी उस सडक को अपने बीच से न निकलने देने को अपने जीवन मरण का प्रश्न बना लिया। स्वाभाविक है कि वहॉ वे मजबूत स्थिति में थे।

मैं समझता हूॅ कि नक्सलवाद का समापन भले ही बहुत दूर हो गया हो किन्तु समापन निश्चित है। अभी न्यायपालिका भी उस जे एन यू संस्कृति से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाई है, किन्तु मुक्त हो रही है। न्यायपालिका को न्याय और व्यवस्था के बीच संतुलन बनाना चाहिये। धीरे धीरे अब उस दिशा में आगे बढ रही है। जिस तरह पूरे भारत में नरेन्द्र मोदी एकपक्षीय रुप से मजबूत हो रहे है वह भी एक वर्ष में और स्पष्ट हो जायेगा और राज्यसभा में भी उनका बहुमत निश्चित है। साम्यवाद अपनी अंतिम सासे गिन रहा है और कट्टरपंथी इस्लाम भी चौराहे पर खडा है। वह भी अब नक्सलवाद का समर्थन करने की स्थिति में नहीं है। विश्व विरादरी में भी नरेन्द्र मोदी और अमेरिका के राष्ट्रपति का तालमेल बढ रहा है। भारत के नक्सलवाद समर्थक सफेदपोश एन जी ओ और साहित्यकार भी धीरे धीरे

कमजोर हो रहे है। स्वामी अग्निवेश और दिग्विजय सिंह भी हार मानने ही वाले है। ऐसी स्थिति में स्पष्ट दिख रहा है कि नक्सलवादियों के सभी पंख धीरे धीरे कतर जायेंगे और उनका पतन निश्चित है। किन्तु वर्तमान समय में कुछ समय के लिए कानून और राजनीति का सहारा पाकर नक्सलवाद बस्तर क्षेत्र में सिर उठाने में सफल दिख रहा है।प्रतिक्षा करिये निकट भविष्य में इस सफलता का कोई न कोई परिणाम निकलेगा और नक्सलवाद फिर से पराजय की ओर बढना शुरु हो जायेगा।

इस संबंध में मेरा कुछ सुझाव भी है। मेरा अनुभव है कि नक्सल नियंत्रित क्षेत्र में किया गया विकास नक्सलवादियों के लिये सहायक होता है। नक्सली उसी से अपना धन जुटाते हैं। सरकार विकास के लिए जो धन भेजती है उसमें से नक्सली भी इक्ट्ठा कर लेते है। सरकार को एक रणनीति बनानी चाहिये। नक्सलनियंत्रित नक्सलप्रभावित और नक्सलमुक्त तीन क्षेत्र अलग अलग करने चाहिये। नक्सलनियंत्रित क्षेत्र में कोई विकास कार्य रोक देना चाहिये तब तक जब तक वह मुक्त न हो जाये। जो क्षेत्र नक्सल मुक्त हुआ है उस क्षेत्र में बहुत तेजी से विकास करना चाहिये जिससे नक्सलनियंत्रित क्षेत्र के लोगों को प्रोत्साहन मिले कि वे भी नक्सलमुक्त बने। नक्सलप्रभावित बीच के क्षेत्र में पुलिस के माध्यम से ही विकास कार्य चलाये जाने चाहिये, स्वतंत्र नहीं। इससे नक्सलनियंत्रण में मदद मिलेगी।

मैं आपको स्पष्ट कर दूँ कि छ0ग0 के मेरे गृहक्षेत्र बलरामपुर रामानुजगंज जिले को नक्सलमुक्त करने में इसी तरह की कोशिशे सफल रही है। नक्सलवादियों के हितैशी निरंतर विकास को समाधान बताकर सरकारों को भटकाने का काम करते है। नक्सलवाद विकास की कमी का परिणाम नहीं है। आदिवासी कभी टकराव नहीं चाहता भले ही वह भूखा क्यों न रह जाये। जब तक वह भारत सरकार को अपनी सरकार मानता है तब तक वह उसकी बात मानता है। और जब नक्सलवादी अपनी सरकार बना लेते है तब वह उस सरकार की बात मानने लग जाता है। बलरामपुर जिले से नक्सलवाद का समापन विकास के आधार पर नहीं हुआ, बल्कि नक्सलवाद के समापन के बाद वहॉ विकास हुआ। बस्तर क्षेत्र में सरकार उल्टे मार्ग पर चल रही है।

2 अनिल शर्मा

प्रश्नः—मुनि जी आपने नक्सलवाद पर अपने लेख में विस्तार से जानकारी दी। यह सच है कि आपने अपने लेख में जिस गहराई व गंभीरता से परिस्थितियों का सूक्ष्मता से अध्ययन किया है। वह सराहनीय है परंतु आपका लेख पडने के बाद ऐसा प्रतीत होता है कि आप इस मामले में निष्पक्ष न रहकर किसी एक पक्ष की तरफ झुक कर अपने निजी विचारों को परिस्थितियों में मिलाकर अपने लेख के माध्यम से वहॉ के जमीनी हालात काक इस तरह पेश कर रहे है जिससे लगता है। कि पूर्व सरकारों की गलती के कारण नक्सलवाद फला फूला परन्तु जब आज की वर्तमान सरकार की बात आती है तो आप उनका अप्रत्यक्ष रुप से बचाव करते हुए दिखते हैं ऐसा लगता है कि आप अपनी निजी निष्ठा और समर्पण के कारण लोगों के बीच ऐसा वातावरण बनाना चाहते हैं। जिससे लगे कि इसमें वर्तमान सरकार का कोई दोष नहीं है। जबकि आप भी जानते है कि छ0ग0 में 15 साल से रमन सिंह की सरकार मैं नक्सलवाइ खूब फला फूला है और पिछले 3 साल में केन्द्र में मोदी सरकार भी जुमले बाजी के अलावा कुछ नहीं कर पाई वह भी फेल हो गई है। परन्तु आप जिस विश्वास के साथ कह रहे है कि नरेन्द्र मोदी अवश्य समस्या खत्म कर देंगे। तो आपको लेख से आपकी निष्ठा पर संदेश होता है। आपके पास ऐसा क्या सबूत या रोड मैप है जिसके आधार पर आप कह रहे है कि मोदी सरकार की तरफ से अधिकृत रुप से कह रहे है। या आपके पास कोई ठोस सुचनाए है। कृपया आप बताए की आपके पास इसका क्या आधार है।

उत्तरः—मैं बचपन से ही समाजवादी विचारों का रहा आज भी मैं नितीश कुमार की नीतियों को मोदी जी की तुलना में अधिक अच्छा मानता हूँ। मेरे मन पर दो संस्कार छाए रहक पहला पारिवारिक सत्ता का विरोध दूसरा अल्पसंख्यक तुष्टीकरण का विरोध। स्वाभाविक है कि मेरे विचार इन दोनों के विरुद्ध एक तरफ झुक सकते है। जब लोकतंत्र अव्यवस्था के मार्ग पर बढता जाता है तब तानाशाही ही एकमात्र समाधान दिखती है। वर्तमान भारत सरकार तानाशाह मोदी और मोहन भागवत की मिली जुली सरकार है। मोदी जी लगातार उस दिशा में बढ रहे है वह सुनते भले ही सबकी हो किन्तु करते मन की है वह मजबूत कदम उठा सकते है जरुरत हुई तो बस्तर में बम भी गिरा सकते है इसलिए संदेह करने की कोई बात नही। अब तक विपक्ष न्यायपालिका मानवाधिकार आज पूरी तरह हार नहीं माने हैं इसलिए अभी समय लग रहा है कुछ माह और प्रतीक्षा करने की जरुरत है रमन सिंह न तो वैसे तानाशाह है ना ही उनके समक्ष वैसी स्थिति है।

3 मयंक आलोक,विचार मंथन ग्रुप से तथा संजय ताती वेपरवाह नोटिज ग्रुप से

प्रश्नः—आपने मंथन क्रमांक 31 में कश्मीर की चर्चा करते समय रामानुजगंज में हिन्दु मुस्लिम एकता की सामाजिक व्यवस्था की चर्चा की। आप बताइये कि रामानुजगंज शहर किस प्रदेश में है तथा वहा की सामाजिक व्यवस्था का संक्षिप्त इतिहास क्या है?

उत्तरः– रामानुजगंज झारखंड के गढवा और युपी के सोनभद्र से सटा छ0ग0 के बलरामपुर जिले का सबसे बडा शहर है। वहॉ पचास वर्षो से समाज सशक्तिकरण का सफल प्रयोग चल रहा है। वैसे तो कई सामाजिक नियम बने हुये है किन्तु बहुत महत्वपूर्ण छः नियमों का मैं उल्लेख कर रहा हूॅ।

1) नियम बना कि किसी भी धर्म के लोगों की कोई गुप्त बैठक नहीं होगी। दूसरे धर्म के दो पूर्व निश्चित लोगों को सुनने देखने की सूचना अनिवार्य होगी।

2) किसी धर्म का लडका दूसरे धर्म की लडकी को पत्नी बनाना चाहता है तो लडके का धर्म बदलेगा,लडकी का नहीं।

3) तीन नम्बर के कार्य ही प्रतिबंधित होंगे, दो नम्बर के नहीं। दो नम्बर के कार्य करने की सामाजिक छूट होगी।

4) तीन नम्बर घोषित व्यक्ति या तो स्वयं को सुधार लें या शहर छोड दें।

5) शहर में बिना सामाजिक अनुमति किसी प्रकार चंदा या हडताल नहीं हो सकती।

6) मंदिर मस्जिद में प्रवेश के समय किसी के धर्म या जाति की जानकारी नहीं की जा सकती।

इस संबंध में अनेक घटनाएॅ घटित हुई जिनमे से पांच उल्लेखनीय है–

1) रामानुजगंज से बाहर के संघ के लोगों ने वहॉ संघ वालो की गुप्त बैठक करनी चाही तो समाज ने संघ की शाखा पर भी तीन वर्ष के लिये प्रतिबंध लगा दिया।

2) पांच मुस्लिम युवकों ने हिन्दू लडकियों से विवाह करना चाहा तो दो तो शहर छोडकर बाहर चले गये तथा तीन ने हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया।

3) तीन नम्बर घोषित एक लडका गिरफ्तार हुआ तो उसका परिवार भी उसकी तब तक जमानत नहीं ले सका जब तक समाज स्वीकृति न दें।

4 दिग्विजय सिंह जी की सरकार ने वहॉ की व्यवस्था को समानातर सरकार कहकर उस पर अमानवीय अत्याचार किये किन्तु वहॉ के लोग झुके नहीं और दिग्विजय सिंह जी को झुकना पडा।

5 सन 2000 के आस पास इस शहर के निकट पूरे जिले में नक्सलवादियों ने अपनी सरकार बना ली। इस शहर के लोगों और सरकार के सामंजस्य से नक्सलवाद हार कर वापस चला गया।

पचास वर्ष बीतने के बाद भी वहॉ की सामाजिक व्यवस्था नब्बे प्रतिशत तक सुरक्षित है। आप देख सकते है।

प्रश्न 4– 2 नम्बर के कार्य और 3 नम्बर के कार्य कैसे अलग अलग है तीन नम्बर के व्यक्ति का निर्धारण रामान ुजगंज में कैसे होता है।

उत्तरः– रामानुजगंज की समाज व्यवस्था में पांच कार्य प्रतिबंधित थे–1 चोरी,डकैती,लूट 2 बलात्कार 3 मिलावट,कमतौलना 4 जालसाजी,धोखाधडी 5 हिंसा, बलप्रयोग। इन पांच कार्यो को तीन नम्बर का माना जाता था और इनके करने वालो पर समाज और सरकार मिलकर रोकते थे। जो कार्य सिर्फ गैर कानूनी या अनैतिक होते थे उन्हें दो नम्बर का माना जाता था और उनकी रोकथाम में रामानुजगंज के नागरिको की कोई भूमिका नहीं होती थी। ऐसे दो नम्बर के कार्यों में जुआ,शराब,गांजा,अफीम,ब्लैक तस्करी,छुआछूत, वैश्यावृत्ति , व्यभिचार, भ्रष्टाचार, वन अपराध सहित हजारों कार्य शामिल होते थे। जो व्यक्ति बार बार चेतावनी के बाद भी तीन नम्बर के कार्य करता रहता था उन्हें शहर के 80 लोगों की एक कमेटी तीन नम्बर घोषित करती थी और प्रतिवर्ष उसके कार्यो की समीक्षा करने के बाद उसका तीन नम्बर का लेबल हटा भी दिया जाता था।

लगभग 20 वर्षो के बाद 2080 के आसपास पूरे शहर में एक सर्वेक्षण कराया गया और उसके आधार पर रामानुजगंज को अपराध नियंत्रित शहर घोषित कर दिया गया। घोषणा के बाद रामानुजगंज के चारों तरफ की सीमाओं पर बडे बडे बोर्ड लगाये गये जिनमें लिखा था भारत का एकमात्र अपराध नियंत्रित नगर रामानुजगंज आपका स्वागत करता है। करीब 10 वर्षो के बाद मध्यप्रदेश सरकार ने उक्त सभी बोर्ड बलपूर्वक हटवा दिये।

5 विरेन्द्र शर्मा फेसबुक से

प्रतिक्रिया– मैं भी रामानुजगंज 2009 में अरविंद केजरीवाल के साथ देखने गया था। पूरी व्यवस्था मैंने देखी है । अब क्या हाल है मुझे पता नहीं।

उत्तरः– हो सकता है कि आप अरविंद केजरीवाल, मनीष सिसोदिया की आठ लोगों की टीम में शामिल होंगे। आपने देखा होगा कि तीन दिनों तक कई कई घंटे बैठकर वहा के लोगों से चर्चा हुई। सब लोग एक साथ जमीन पर ही बैठते थे। कोई कितना भी बडा हो किन्तु उंच नीच का भेद नहीं था। वही बैठकर अरविंद केजरीवाल जी ने अपनी स्वराज्य पुस्तक की रुपरेखा तैयार की थी। यह अलग बात है कि अब सत्ता प्राप्त होने के बाद उस पुस्तक को वे भूल गये।

6 देवनारायण जी भारद्वज,अलीगढ उ0प्र0

प्रश्न–आपके उर्जावान मस्तिष्क में अन्तर्ज्ञान एवं अनुभव कूट कूट कर भरा है। यह उपहार कहें या उपकार कहें जो हमको प्रतिपक्ष ज्ञानतत्व के माध्यम से मिलता रहता है। पढकर आपके प्रति कृतज्ञताभाव जाग्रत होता है किन्तु मन ही मन में रह जाता है। इस पत्र के द्वारा आज आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ । स्वयं पढकर अन्य साथी भी इससे लाभान्वित होते है।

आप पाठकों की जिज्ञासाओं का शमन भी करते रहते है। आपको मैं क्षमा याचना के साथ आधुनिक आचार्य चाणक्य कहने का साहस जुटा रहा हूँ।

उत्तर–आपने अपने मन की बात लिखी किन्तु यह स्वीकार करना मेरे लिए उचित नहीं क्योकि यह भी संभव है कि आचार्य चाणक्य कई गुणों में मेरे से कई गुना अधिक हों और यह भी संभव है कि कुछ मामलों में मेरे विचार भविष्य में उनकी अपेक्षा अधिक उपयोगी सिद्ध हों। अभी तो मेरा कार्यकाल समाप्त नही हुआ है इसलिए यह टिप्पणी मैं स्वीकार नहीं कर सकता। आपके पत्र से इतना अवश्य हुआ है कि मेरा उत्साह बढा है और मैं आपको आश्वस्त करता हूँ कि मेरा कोई कार्य आपकी धारणा को नुकसान नहीं पहुचायेगा।

7 अंशुमाली दीक्षित, पीलीभीत

प्रश्नः–ज्ञानतत्व 349 एक से पन्द्रह मार्च प्राप्त हुआ प्रसन्नता हुई कि आपने विस्मृत नहीं किया है। सधन्यवाद अवगत कराना उचित प्रतीत हुआ कि गांधी और नेहरु विचारधारा का जैसा उल्लेख आपने किया वह आपका अपना दृष्टिकोण हो सकता है। वास्तव में विश्व राजनीति में दक्षिणपंथ,वामपंथ जिसे मार्क्सवाद भी कहा जाता है दो ही धाराए है।

ब्रिटिश सत्ता दक्षिण पंथी और भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन वामपंथी जो आजादी को बन्दूक की नली से निकलना मानता है। जिसका स्पष्ट स्वरुप सावरकर और क्रांतिकारी गुटों में भी दिखाई देता है।

दक्षिण अफ्रीका के अनुभव और कार्यशैली, जो अंगेजी सत्ता को नुकसानदायक नहीं लगती थी, का सफलतम प्रयोग गांधी जी द्वारा तीसरी विचारधारा मध्यमार्ग सविनय अवज्ञा आन्दोलन और अहिंसा जैसी अवधारणा प्रस्तुत की गई।

आपने गांधी और नेहरु विचारधारा की बात लिखी है वह आपकी व्यक्तिगत विचारधारा हो सकती है। क्योंकि स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय हर व्यक्ति अपने में एक विचारधारा था परन्तु अंततः गांधीजी का निर्णय ही सर्वमान्य होता था। क्योकि उनके निर्णय में मात्र सत्य और अहिंसा ही होते थे। उनका निर्णय मनवाने या प्रचारित करने का मार्ग उपवास अनशन कभी कभी आमरण अनशन तक होता था वह भी व्यक्तिगत ।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के कर्णधार गांधी स्वतंत्र भारत में मात्र साढे पांच माह ही सांस ले सके। यदि स्वाभाविक मृत्यु से कुछ वर्ष और जीवित रहे होते तो शायद आप जैसे महान चिन्तकों को यह सब नही कहना पडता।

हिन्दी हिन्दू हिन्दूस्तान का नारा देने वालो से पूछना चाहता हूँ कि आजीवन हिन्दी हिन्दू हिन्दूस्तान की सेवा करने वाले त्यागी पुरुष महात्मा गांधी की हत्या एक हिन्दू ने ही की। क्यों?

जैसा आपने लिखा गांधी जी की हत्या के बाद नेहरु संस्कृति पूरे भारत पर लागू हो गयी। ऐसा मात्र आर0एस0 एस0 संगठन मानता और प्रचारित करता है। संघ तो गांधी विचार को उचित नहीं मानता और केवल अपने ही विचारों को हिटलर की भांति मनवाना चाहता है। साथ ही गांधी और नेहरु को अपमानित करने का कोई अवसर छोडना नहीं चाहता। ज्ञानतत्व के माध्यम से पूछना चाहता हूँ कि गांधी नेहरु ने अपना सम्पूर्ण जीवन देश हित में लगा दिया । अपने लिए क्या लिया। यदि संभव हो तो आर एस एस के लोग बताए।

15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ और 26 जनवरी 1950 को भारतीय संविधान लागू हुआ । इस बीच के 2 वर्ष पांच माह दस दिन तक ब्रिटिश वायसराय के अधीन निर्देशन में प्रधानमंत्री नेहरु गर्व करते रहे। आजादी मिलने के बाद भी इतने समय तक हम परोक्षतः गुलाम ही थे। अतः कश्मीर समस्या को संयुक्त राष्ट्र ले जाने के दोषी नेहरु जी कैसे हो गये। लेकिन भारत के दक्षिण पंथी पूंजीवादी और उनकी समर्थक संस्थाए नेहरु को दोषी मानते है। जबकि नेहरु के मार्गदर्शक गांधी जी को मौत के घाट इसी पूंजीवादी ने उतरवा दिया। हिन्दू मुस्लिम द्विराष्ट्रवाद के फलस्वरुप मिली खण्डित आजादी ने भी मारकाट और दंगे पूंजीवाद द्वारा ही प्रायोजित थे केवल यह साबित करने के लिए कि भारत के लोग आजादी के योग्य नहीं है। जिसके लिए स्वतंत्रता आयोजन त्याग कर गांधी दंगा रोकने के लिए नोआखाली में आमरण अनशन कर रहे थे और सफल भी हुए। इसी घटना ने पूंजीपतियों को सोचने पर विवश किया कि जब तक गांधी जी जिन्दा है हमारी मनमानी नहीं चलेगी। अतः आगे जो हुआ सभी अवगत हैं।

गांधी विचार के वास्तविक उत्तराधिकारी एंव गांधी मानस पुत्र आचार्य विनोबा भावे गांधी हत्या के बाद अर्न्तमुखी हो गये। सर्वोदय परिवार ने सक्रिय राजनीति के स्थान पर सामाजिक संगठन का स्वरुप ले लिया। गांधी के अभाव में उनके अनुयायी नेहरु के साथ चले गये। आंशिक सत्य हो सकता है । सत्ता भोगी नेहरु जी के साथ और शेष सामाजिक रुप से सक्रिय हो गए। यदि सभी नेहरु जी के साथ हो गये होते तो जे पी आन्दोलन समग्र कांति का आहवान कौन करता?

हॉ पूंजीवाद और पूंजीवादी राष्ट्रों से मोह भंग के बाद निर्गुट आन्दोलन के सूत्रधार संस्थापक नेहरु जी की विदेशनीति का मूलाधार मध्यमार्ग ही बना। निर्गुट आंदोलन में अधिकतर वामपंथी राष्ट्र ही थे। अतः वामपंथ की ओर नेहरु जी का झुकाव स्वाभाविक व देशहित में था जो दक्षिण पंथ को प्रति उत्तर भी था। भारत रुस सामरिक संधि भारत की भाग्य रेखा बनी और आज भी है।

गांधीजी जहॉ उद्योग और कृषि आधारित अर्थव्यवस्था के पोषक और समर्थक थे वहीं नेहरु जी बडे उद्योगों,कारखानों के समर्थक थे। यदि गांधी जी जीवित रहे होते तो भारत का विकास मॉडल कुछ और ही होता।

चालाकी बलप्रयोग वर्ग निर्माण आदि जो नेहरु मांडल की कमियां मानी गयी है वास्तव में वह 1860 में गुलाम भारत पर लागू आई पी सी की देन है। विश्वास कीजिये कि आई पी सी में सुधार किए बिना कोई नेतृत्व भारत से भ्रष्टाचार अनैतिकता कालाधन माफिया राजशासन प्रशासन गुण्डा नेता समीकरण समाप्त नहीं कर सकता।

अतः आप जैसे चिन्तकों और संघर्षशील आत्माओं को इस आई पी सी का भारतीयकरण करने और कराने का प्रयास करना होगा। आजादी प्राप्ति के बाद गांधी ने कहा था कि अभी एक लडाई और बाकी है शायद वह आई पी सी सुधार की लडाई ही हो।

उत्तरः—मैने उपरोक्त लेख में गांधी और नेहरु की तुलना की। गांधी नेहरु और संघ की नहीं। आप भी मानते है कि गांधी और नेहरु की तुलना में गांधी अधिक श्रेष्ठ थे और मैं भी यह मानता हूॅ कि नेहरु और संघ की तुलना में नेहरु अधिक श्रेष्ठ थे। पंडित नेहरु ने जितनी गंभीर गलतियां की उसकी अपेक्षा अधिक गंभीर गलतियां संघ ने की है।

आपने दक्षिण पंथ और वामपंथ की चर्चा की है। मैं इनसे भी अधिक महत्वपूर्ण मानता हूॅ तानाशाही और लोकतंत्र की चर्चा । तानाशाह व्यक्ति के मूल अधिकारों का अस्तित्व स्वीकार नहीं करता जबकि लोकतंत्र करता है। वामपंथी साम्यवादी तथा दक्षिणपंथी हिन्दू महासभा संघ परिवार तानाशाही पर विश्वास करते है और हिंसा को अंतिम शस्त्र की जगह प्रथम शस्त्र मानते है। इसी तरह मुस्लिम बहुमत भी तानाशाही का ही पक्षधर है। गांधी हत्या के बाद नेहरु जी को यह चाहिये था कि वह साम्प्रदायिक हिन्दू गुटो को पूरी तरह कुचल देते किन्तु उन्होने बैलेंस बनाने के लिए साम्प्रदायिक इस्लाम और वामपंथ को प्रश्रय दिया। आज भारत यदि साम्प्रदायिक हिन्दू और साम्प्रदायिक मुसलमानों के बीच कटने मरने को तैयार है तो इसका दोष पंडित नेहरु को क्यो न दी जाये? नेहरु जी को लोकतंत्र और तानाशाही के बीच साम्यवादी अल्पसंख्यक तानाशाही की तरफ झुककर अपने को निर्गुट कहने का ढोंग रचने की आवश्यकता क्यों पडी। क्यों नहीं उन्होने उस समय गांधी की तटस्थ नीति पर बढने का प्रयास किया? संघ को गाली देने के नाम पर संघ सरीखे ही किसी दूसरे तानाशाह समूह से हाथ मिला लेना उचित नहीं कहा जा सकता। क्या पंडित नेहरु ने धर्म निरपेक्षता के नाम पर अल्पसंख्यक तुष्टीकरण को प्रोत्साहित नहीं किया। क्या पंडित नेहरु ने हिन्दू कोड बिल बनाकर टकराव के बीज नहीं बोये । क्या पंडित नेहरु के लिए यह उचित नहीं था कि भारत व्यक्तियों का देश होगा, धर्मो जातियों का संघ नही। भारत के प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार होगा और उनमें धर्म जाति या लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जायेगा। मैं मानता हूॅ कि संघ की तुलना में नेहरु अच्छे हो सकते है किन्तु डॉ लोहिया ,जयप्रकाश ,नारायण सरीखे लोगों से तुलना की जाये तो नेहरु ने देश का बहुत बडा नुकसान किया है।

यदि हम लोकतंत्र और तानाशाही की तुलना छोडकर पूंजीवाद और साम्यवाद की तुलना करें तब भी पूंजीवाद में अनेक दोष होते हुए भी वह साम्यवाद से कई गुना अच्छा था। बहुत वर्ष बाद साम्यवादी देश भी इस सच्चाई को समझे। भारत भी आज से 25 वर्ष पहले इसे समझ गया। पता नहीं पंडित नेहरु क्यों अपने कार्यकाल में इस सच्चाई को नही समझ सके। यदि उन्होने जानबूझकर गलती नहीं भी की हो तब भी आज विवेचना करते समय हमें उनकी गलतियों की भी समीक्षा करनी चाहिये। जब उस समय शासन व्यवस्था में दो धाराओं के बीच एक चुनाव करना था जिसमें एक धारा थी परिवार,गांव,जिला,प्रदेश,देश,तथा दूसरी धारा थी व्यक्ति, जाति, कुल/वर्ण , धर्म। नेहरु जी और अम्बेडकर जी ने संविधान में जाति धर्म को घुसा दिया और परिवार गांव को निकाल दिया। तो आप बताइये कि यह गलती जानबूझकर की गई क्यों न माना जाये ।इन दोनों नेताओं ने मिलकर साम्यवाद का वर्ग विद्वेश वर्ग संघर्ष का घातक सिद्धांत अक्षरशः स्वीकार कर लिया। तो समीक्षा करते समय ऐसी गलतियों की अन्देखी नहीं हो सकती। संघ विरोध के नाम पर नेहरु अम्बेडकर की प्रशंसा करना हमारा उददेश्य नहीं।